Nāsadīyam
A Multi-Disciplinary National Research Journal (Annual)
Peer Reviewed/Refereed
Available online at: https://nasadiyam.dmmkkr.ac.in/
Volume 3, Issue 1 (Jan – Dec), 2024, Pp 17-22

डॉ. धर्मवीर भारती के साहित्य में समाजधर्मिता

डॉ० सीमा सिंह
सहायक प्रवक्त्री (हिन्दी विभाग)
दयानंद महिला महाविद्यालय
कुरुक्षेत्र, हरियाणा, भारत
ई-मेलः seemasingh0105@gmail.com
दूरभाषः 9416935505

संक्षेपिका

डॉ.धर्मवीर भारती आधुनिक हिंदी साहित्य के सशक्त और महत्वपूर्ण कवि रहे हैं। उनकी कलम से हिंदी साहित्य को दिशा देने वाली अनेक कृतियों का निर्माण हुआ। प्रथम दृष्टि से देखने पर लगता है कि वह एक शुद्ध प्रयोगवादी कवि हैं, परंतु ज्यों-ज्यों उनके काव्य का संसार खुलता जाता है, हमें उनके भावों का विस्तार और दर्शन का फैलाव दिखाई देने लगता है। उनका काव्य-संसार केवल प्रयोगवाद तक ही सिमट कर नहीं रहता, वह कहीं प्रगतिवादी दिखाई देता है और कहीं समकालीनता के आंचल को समेटता हुआ। कहीं उनकी कलम विद्रोही का रूप ले लेती है, तो कहीं दार्शनिक की मुद्रा में आ जाती है। अनेक भावों के इंद्रधनुषी रंग उनके काव्य में बिखरे पड़े हैं; जैसे जीवन के सब क्षणों को सांसें देते हुए से । एक तत्त्व जो उनकी आरंभिक कविताओं से लेकर अंतिम तक साथ चलता है, वह है उनकी समाजधर्मिता का। वह हर स्थान और समय पर समाज निरपेक्ष न रहकर समाज सापेक्ष रहे हैं। प्रस्तुत शोधपत्र में धर्मवीर भारती जी की समष्टिगत दृष्टि और समाज के प्रति उनके समर्पण पर प्रकाश डालते हुए, उनकी समाजधर्मिता को दर्शाने का प्रयास किया गया है।

कुंजी शब्द: समाजधर्मिता, समष्टिगत, प्रयोगवाद, अहंवादी, अनुभूतियां, वैयक्तिक चेतना, आस्थावान, कविताएं, निरपेक्ष, भारतीय समाज, चिंतन-मनन, मानवीय-मूल्य।

शोधपत्र

डॉ. धर्मवीर भारती आधुनिक हिंदी कविता के एक सशक्त हस्ताक्षर हैं। अज्ञेय जी ने अपने प्रथम तार-सप्तक में उन्हें प्रतिभाशाली सात प्रयोगवादी सितारों में महत्वपूर्ण जगह दे कर, उनकी कविताओं को पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया। धर्मवीर भारती ने भारतीय समाज में अपनी विभिन्न रचनाओं और कविताओं के माध्यम से नई आशाओं और अभिलाषाओं का संचार किया है ।

उनके बारे में लिखते हुए प्रसिद्ध आलोचक हरिचरण शर्मा जी ने कहा है कि,'आज दुनिया कितनी बदल गई है, कहीं आराम नहीं, कहीं चैन नहीं। सभी जगह थकान ही थकान, विवशता ही विवशता, टूटन ही टूटन और इन सब के ऊपर कहीं कोई आशा की किरण नहीं दिखाई देती है। अपने काव्य-संग्रह 'सात गीत वर्ष' में धर्मवीर भारती आस्था और विश्वास का दीप जलाकर सभी पराजितों को आशा और विश्वास की छांह में जीवन बिताने के लिए 'न्योता' देते हुए से प्रतीत होते हैं।'[1]

अक्सर प्रयोगवादी कवियों के बारे में कहा गया कि वे व्यक्तिगत अनुभूतियां को अत्यधिक महत्व देते हुए अहंवादी दिखाई देते हैं, परंतु यह सत्य नहीं है क्योंकि ये कवि अपने आप को समाज से अलग सोच ही नहीं सकते। 'अन्य प्रयोगवादी कवियों की भांति धर्मवीर भारती की अधिकतर कविताएं वैयक्तिक चेतना से परिपूर्ण होते हुए भी उनकी दृष्टि समष्टिगत रही है। एक तरफ उनकी कविताओं में व्यक्ति के प्रश्न प्रमुख हैं तो दूसरी तरफ उन्होंने

अपनी रचनाओं में युग की समस्याओं को भी गंभीरता से उभारा है। कवि भारती के चिंतन में सदैव एक संतुलन रहा है। उनकी रचनाओं में जहां व्यक्तिगत चेतना का स्वर गूंजता है, वहां परंपरागत समष्टि भाव भी उपलब्ध होता है।[2] उनकी कविताओं में आशा और निराशा, सकारात्मकता और नकारात्मकता, जीवन और मृत्यु में एक संतुलन प्रस्तुत रहता है, बल्कि विपरीत परिस्थितियों में भी वह आशा की किरण देख लेते हैं:

‘मर गई कविता?
जवानी मर गई?
मर गया सूरज सितारे मर गए
मर गए सौंदर्य सारे मर गए
सृष्टि के आरंभ से चलती हुई
प्यार की हर सांस पर पलती हुई
आदमीयत की कहानी मर गई?’[3]

और जैसे अगले ही पल वह सचेत होकर कह उठते हैं:

‘झूठ है यह!
आदमी इतना नहीं कमजोर है!
पलक के जल और माथे के पसीने से
सींचता आया सदा जो स्वर्ग की भी नींव
ये परिस्थितियों बना देगी उसे निर्जीव?
झूठ है यह !
फिर उठेगा वह
और सूरज को मिलेगी रोशनी।[4]

कहीं-कहीं अपने जीवन से भारती जी बहुत उत्साहित नहीं लगते है, बल्कि ऐसा लगता है की बहुत हतोत्साहित हैं। उन्हें लगता है जीवन निरर्थक खाली प्याले सा बीत गया है:

’मैं क्या जिया ?
मुझको जीवन ने जिया
बूंद —बूंद कर पिया, मुझको
पीकर पथ पर खाली ’प्याले —सा छोड़ दिया।’[5]

कवि एक तरफ दुखों से, पीड़ा से, जीवन में मिली हार से निराश है, परंतु वह पराजित नहीं है। वह अब भी जीवन के प्रति आस्थावान है। उन्हें विश्वास है कि अगर निराशा के सागर से घिरी जिंदगी आज अपूर्ण है, अकेली है तो वह कल नई दिशा को प्राप्त करेगी और नए सिरे से उसे संवारकर, पूर्णता को प्राप्त करेगी, जीवन में एक नया सूरज उगेगा, जिसकी रोशनी चारों तरफ बिखरकर प्रकाश कर देगी-

’रात
पर मैं जी रहा हूं निडर
जैसे कमल

जैसे पंथ
जैसे सूर्य।'[6]

धर्मवीर भारती बहुत जागरूक और चेतनशील कवि रहे हैं। वह अपने आसपास के घटनाक्रम को बहुत सूक्ष्मता से देख पाने में समर्थ हैं और पाठकों को भी सजग रहने के लिए प्रेरित करते हैं। 'गुलाम बनाने वाले' नामक कविता में उन्होंने बड़ी स्पष्टता से गुलामी के कारणों का विश्लेषण किया है। वह लिखते हैं:

'आधे हैं, जिनके हाथों में है कैमरे
थैलियां, टूअरिस्ट पासपोर्ट
रंग-बिरंगी फिल्में
आधे हैं,
जिनके पास रंग-बिरंगे चेहरे
[जिनको वह हुकुम के मुताबिक बदल सकते हैं]
दो-दो आने वाले
दूर किसी नगरी में छपे हुए
पैम्फ्लैट के ढ़ेरों में ढंक -ढंक कर आई हैं
दूर किसी नगरी में ढली हुई जंजीरें।'[7]

उनकी कविताओं में सब मनोभावों के लिए जगह है परंतु वह नकारात्मक भाव को महत्व न देकर सकारात्मक को अधिक महत्व देते हैं। उनकी कविताओं में प्रणय-संवेदना है। यहां संघर्ष, आस्था और विश्वास, कवि की शक्ति और आशा बनकर आए हैं। 'निराशा, पराजय एवं अनास्था का कुहासा 'अंजुरी भर धूप' से दूर हो जाता है। इस संकलन में प्रणय राग के अतिरिक्त संक्रांति वेला में गाए गए 'पराजित पीढ़ी के गीत' के दर्द को भी कवि ने उभारा है और 'धूल भरी आंधी' का भी साक्षात्कार किया है। कवि के मन की प्यास मुर्दा होकर पिघले फूलों की आग बनकर एक नया प्रश्नचिन्ह लगाती है। युगीन परिस्थितियों का दंश और अभिशाप फूट पड़ता है और कहीं यथार्थ के धरातल पर उतरकर सांस्कृतिक एवं राजनीतिक विसंगतियों के प्रति कटुता एवं व्यंग्य से भर उठता है।[8]

धर्मवीर भारती मानवीय मूल्यों की गरिमा को समझते हुए उनकी प्रतिष्ठा करना चाहते हैं, परंतु साथ ही आत्म-आचरण की शुद्धत्ता को भी महत्व देते हैं। वे अपने अंदर झांकने की आवश्यकता को रेखांकित करते हुए कहते हैं:

'हम सबके दामन पर दाग
हम सब की आत्मा में झूठ
हम सबके माथे पर शर्म
हम सबके हाथों में टूटी तलवारों की मूठ
हम सब सैनिक अपराजेय।'[9]

उन्हें मालूम है कि एक कवि होना आसान नहीं है। उस पर सारे समाज का हक होता है। अपने उत्तरदायित्व को पूरा करना उसका प्रथम कर्तव्य होता है। अपनी प्रसिद्ध रचना 'प्रगतिवाद: एक समीक्षा' की

भूमिका में वह बड़े स्पष्ट शब्दों में लिखते हैं कि,'मानवता को प्यार करने वाले एक ईमानदार कलाकार के नाते प्रगति मेरा ईमान है, मेरी कलम की जवानी है, अपनी आत्मा में मैं जिस सत्य का साक्षात्कार करता हूं उसे निर्भीकता से आगे रखना मेरा कर्तव्य है।'[10] आगे वह लिखते हैं कि, 'मैं अपने को स्वत: में संपूर्ण, निस्संग, निरपेक्ष, सत्य नहीं मानता। मेरी परिस्थितियां, मेरे जीवन में आने और आकर चले जाने वाले लोग, मेरा समाज, मेरा वर्ग, मेरे संघर्ष, मेरी समकालीन राजनीति और समकालीन साहित्यिक प्रवृत्तियां, इन सभी का मेरे और मेरी कविता के रूप-गठन और विकास में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष भाग रहा है। मैं और मेरी कविता तो चाक पर चढ़ी हुई गीली मिट्टी है, जिसमें से कोई अनजान उंगलियां धीरे-धीरे मनचाहा रूप निकाल रही हैं।'[11]

लेखन करने के साथ-साथ कवि में गंभीरता और परिपक्वता पकने लगती है। उनके बारे में डॉक्टर नागेंद्र अपने साहित्य के इतिहास में लिखते हैं,'भारती की आरंभिक कविताएं बहुत कुछ कैशोर भावुकता से युक्त हैं। भारती में आदिम गंध की तड़प और लोक जीवन की रूमानी छवि की पकड़ है। इन कविताओं में लोक-परिवेश की मस्ती और उल्लास के स्थान पर उदासी और सूनापन ही अधिक उभरता है।'[12] उनके द्वारा रचित 'फागुन की शाम' कविता में उनके लोक जीवन और रूमानियत के दर्शन इक्कट्ठे ही पाए जा सकते हैं:

'घास के रस्ते उसे बंसवट से
इक पीली- सी चिड़िया
उसका कुछ अच्छा-सा नाम है
मुझे पुकारे ताना मारे
भर आए आंखड़ियां,
उन्मन यह फागुन की शाम है।'[13]

उनकी लेखनी ज्यों-ज्यों आगे चलती जाती है, उनके भाव विस्तार पाते जाते हैं। कवि कहीं भी परंपराओं से मुंह मोड़ते हुए दिखाई नहीं देते, बल्कि उनकी आवश्यकताओं पर जोर देते हैं। वह नहीं चाहते, कि हम उन्हें बेकार और व्यर्थ की वस्तु समझ कर उपेक्षित कर दें :

'मैं रथ का टूटा पहिया हूं
लेकिन मुझे फेंको मत
इतिहास की सामूहिक गति
सहसा झूठी पड़ जाने पर
क्या जाने
सच्चाई, टूटे हुए पहियों का आश्रय ले।'[14]

'भारती के काव्य की एक बहुत बड़ी विशेषता है -उसकी मूर्तता और पारदर्शिता, जो उनके परवर्ती गंभीर और चिंतन-संवलित काव्यों में भी लक्षित होती है। सात गीत-वर्ष की कविताओं में कवि की रूमानी भावुकता ने यथार्थ की गहराई पा ली है, बहुत-सी कविताएं यहां भी प्रेममूलक हैं, किंतु यहां प्रेम के बहुत सूक्ष्म और संक्रांत अनुभवों को उभारा गया है। इसमें कुछ व्यंग्यात्मक कविताएं भी हैं, जो किसी सांस्कृतिक, सामाजिक या राजनीतिक विसंगति पर हल्का-हल्का आघात करती हैं। मूल्यों-संबंधी प्रश्न भी उभर गए हैं, किंतु मानव—संवेदना की आंच में।'[15] 'कनुप्रिया' तक आते-आते कवि जीवन के जिए हुए सत्य और अनजिए सत्य की बात करने

लगता है। राधा के माध्यम से वह इस प्रश्न का हल खोजने लगता है। एक बात तो तय है कि वह सत्य कभी भी हिंसा और युद्ध के मार्ग पर चलकर तो प्राप्त नहीं किया जा सकता:

‘हारी हुई सेनाएं, जीती हुई सेनाएं
नभ को कंपाते हुए, युद्ध -घोष, क्रंदन-स्वर,
भागे हुए सैनिकों से सुनी हुई
अकल्पनीय अमानुषित घटनाएं युद्ध की,
क्या यह सब सार्थक हैं?[16]

‘कनुप्रिया’ एक ऐसा प्रबंध काव्य है जो आधुनिक शिल्प और भावबोध दोनों को आत्मसात कर सका है। ‘कनुप्रिया’ की मूल संवेदना प्रेम है, किंतु इस संवेदना को उसकी गहराइयों में उभारते हुए भी कवि मूल्यों से उसे असंपृक्त नहीं कर सका है। कृष्ण का युद्ध सत्य है या राधा के साथ उनके तन्मयता में बीते प्रेम क्षण? शायद प्रेम के क्षण ही सत्य हैं, क्योंकि वे दुविधाहीन मन की संकल्पनात्मक अनुभूति हैं और युद्ध दुविधा की उपज, अनजिये सत्य का आभास। 'कनुप्रिया ' अपनी संवेदनात्मक गहराई और शिल्प की ताजगी के कारण एक विशिष्ट उपलब्धि है।’[17] साथ ही कवि मानव सुलभ सौंदर्य और मानवीय गरिमा को प्राथमिकता देते हुए उसके सहज-सुलभ व्यवहार की ताजगी को महसूस करवाना चाहते हैं। उनके लिए मनुष्य की सच्ची मुस्कान और प्रेम ही पृथ्वी पर स्वर्ग के समान है:

‘अगर सच पूछो मेरी प्राण!
व्यर्थ है स्वर्ग-नरक अनुमान
तुम्हारी मुस्काहट में स्वर्ग,
तुम्हारे आंसू में भगवान।[18]

धर्मवीर भारती आधुनिकता और भौतिकता के बोझ से दबी हुई मनुष्य की आत्मा के मौन को बर्दाश्त नहीं कर सकते। वे आत्मा की आवाज को मनुष्य के लिए जिंदा रहने की अहम शर्त मानते हैं, उसको सुने बिना मन के धुंधलेपन को दूर नहीं किया जा सकता:

‘फीकी-फीकी शाम हवाओं में घुटी-घुटी आवाजें,
यूं तो कोई बात नहीं पर फिर भी भारी-भारी जी है,
माथे पर दुख का धुंधलापन, मन पर गहरी-गहरी छाया,
मुझको शायद मेरी आत्मा ने आवाज कहीं से दी है।’[19]

धर्मवीर भारती नि:संदेह आधुनिकता बोध के कवि हैं। जीवन के विविध रंगों से रंगी हुई उनकी कविताओं को पढ़ते हुए मनुष्य अपने अंदर तो झांकता हुए समाज को हमेशा अपने मानस में रखता है। वह बताते हैं कि व्यक्तिगत सौंदर्य, समष्टि सौंदर्य में ही निहित है। दोनों एक दूसरे के पूरक हैं तथा समाज से दूर रहकर कोई मानव कभी भी मनुष्यता को नहीं पा सकता। समाज सापेक्षता ही प्रत्येक युग में साहित्य की जीवनी-शक्ति रही है और धर्मवीर भारती का साहित्य, विशेषतौर से उनकी कविताएं इसका अपवाद नहीं है।

सन्दर्भ सूची:-

1. शर्मा, हरिचरण, 2015, नयी कविता नये संदर्भ, गौतम बुक कंपनी, जयपुर, पृष्ठ-191
2. राजपाल, हुकुमचंद, 1972, धर्मवीर भारतीर : 'साहित्य के विविध आयामष' दीपक प्रकाशन, जालंधर शहर, पृष्ठ-39
3. भारती, धर्मवीर, 1952, ठंडा लोहा तथा अन्य कविताएं, साहित्य भवन लिमिटेड, इलाहाबाद, पृष्ठ-48
4. भारती, धर्मवीर, 1952, ठंडा लोहा तथा अन्य कविताएं, साहित्य भवन लिमिटेड, इलाहाबाद, पृष्ठ-48
5. भारती, धर्मवीर, 1964, सात गीत वर्ष, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, नई दिल्ली,पृष्ठ-38
6. भारती, धर्मवीर, 1964, सात गीत वर्ष, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, नई दिल्ली,पृष्ठ-43
7. वही, पृष्ठ-48
8. शर्मा, श्रीनिवास, 1977, हिंदी के आधुनिक प्रतिनिधि कवि, दिल्ली तक्षशिला, पृष्ठ-229
9. भारती, धर्मवीर, 1964,सात गीत वर्ष, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ-10
10. भारती, धर्मवीर, प्रगतिवादर : एक समीक्षा, साहित्य भवन लिमिटेड प्रयाग, 1949, पृष्ठ-2
11. भारती, धर्मवीर, 1952, ठंडा लोहा तथा अन्य कविताएं, साहित्य भवन लिमिटेड, इलाहाबाद, पृष्ठ-8
12. डॉ० नगेंद्र, डॉ० हरदयाल, 2017, हिंदी साहित्य का इतिहास, मयूर पेपरबैक्स, इंदिरापुरम, पृष्ठ-620
13. भारती, धर्मवीर, 1952, ठंडा लोहा, साहित्य भवन लिमिटेड, प्रयाग, पृष्ठ-20
14. भारती, धर्मवीर, 1964, सात गीत वर्ष, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, नई दिल्ली,पृष्ठ-51
15. डॉ० नगेंद्र, डॉ० हरदयाल, 2017, हिंदी साहित्य का इतिहास, मयूर पेपरबैक्स, इंदिरापुरम, पृष्ठ-621
16. भारती, धर्मवीर, 1949 ई, कनुप्रिया, भारतीय ज्ञानपीठ, वाराणसी, पृष्ठ-73
17. डॉ० नगेंद्र, डॉ० हरदयाल, 2017, हिंदी साहित्य का इतिहास, मयूर पेपरबैक्स, इंदिरापुरम, पृष्ठ-625
18. भारती, धर्मवीर, 1952, ठंडा लोहा, साहित्य भवन लिमिटेड, प्रयाग, पृष्ठ-31
19. भारती, धर्मवीर, 1952, ठंडा लोहा, साहित्य भवन लिमिटेड, प्रयाग, पृष्ठ-31